गीताप्रेस (कल्याण-गीताप्रेस)

वेद और वेदव्यास

भारतीय संस्कृतिके प्राणतत्त्व वेद ही हैं, यह आर्यमेधाने मुक्तकण्ठसे स्वीकार किया है। भारतीय धर्म, दर्शन, अध्यात्म, आचार-विचार, रीति-नीति, विज्ञान-कला—ये सभी वेदसे अनुप्राणित हैं। जीवन और साहित्यकी कोई विधा ऐसी नहीं है जिसका बीज वैदिक वाङ्मयमें न मिले। समष्टि-रूपमें समग्र भारतीय साहित्य, जन-जीवन एवं सभ्यताकी आधारभूमि यदि वेदोंको ही कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

वेदोंका प्रादुर्भाव कब किसके द्वारा हुआ? इस सम्बन्धमें स्मृति-वचन ही प्रमाण है—

'अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा'

अर्थात् वेदवाणी अनादि, अनन्त और सनातन है एवं ब्रह्माजीद्वारा उसे लोकहितार्थ प्रकट किया गया है।

वेद कितने हैं? इस सम्बन्धमें तैत्तिरीय (३।१०।११३)-के कथनको यदि अधिमान दिया जाय तो मानना होगा कि वेदका कोई अन्त नहीं है—**'अनन्ता वै वेदाः'**। वस्तुतः ईश्वरीय ज्ञानकी कोई सीमा हो ही नहीं सकती, फिर भी अपने-अपने दृष्टिकोणसे इस सम्बन्धमें मन्थन कर कुछने वेदोंकी संख्या तीन तथा कुछने चार प्रतिपादित की है। अमरकोषमें प्रथम काण्डके शब्दादिवर्गमें वेदको त्रयी कहा गया है—**'श्रुतिः स्त्री वेद आम्नायस्त्रयी'** तथा **'स्त्रियामृक् सामयजुषी इति वेदास्त्रयस्त्रयी'** अर्थात् ऋक्, साम और यजु—वेदके तीन नाम हैं और तीनोंका समूह वेदत्रयी कहलाता है।

उपर्युक्त त्रयीके विपरीत महाकाव्यमें वेदोंकी संख्या चार बतायी गयी है—**'चत्वारो वेदाः साङ्गाः सरहस्याः।'** इसके अतिरिक्त चार संख्याके प्रतिपादक अन्य प्रमाण भी इस प्रकार उपलब्ध होते हैं—

१.ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान् गायत्रं त्वो गायति शक्करीषु।
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उ त्वः॥

(निरुक्त १। २)

२. अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरसः। (बृ० उ० २। ४। १०)

३. तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः०। (मुण्डक० १। १। ५)

४-चत्वारो वा इमे वेदा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदो ब्रह्मवेदः। (गो० ब्रा० १। २। १६)

५-ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दाꣳसि जज्ञिरे॥ तस्माद्यजुस्तस्मादजायत॥ (यजु० ३१। ७)

इस प्रकार उक्त प्रमाणोंमें चार वेदोंका स्पष्ट उल्लेख है।

कहा जाता है कि वेद पहले एक ही था, वेदव्यासजीने उसके चार भाग किये थे। महाभारतमें इस ऐतिहासिक तथ्यका उद्घाटन इस प्रकार किया गया है—

यो व्यस्य वेदांश्चतुरस्तपसा भगवानृषिः।
लोके व्यासत्वमापेदे काष्ण्यात् कृष्णत्वमेव च॥

अर्थात् 'जिन्होंने निज तपके बलसे वेदका चार भागोंमें विस्तार कर लोकमें व्यासत्व-संज्ञा पायी और शरीरके कृष्णवर्ण होनेके कारण कृष्ण कहलाये।' उन्हीं भगवान् वेदव्यासने ही वेदको चार भागोंमें विभक्त कर अपने चार प्रमुख शिष्योंको वैदिक संहिताओंका अध्ययन कराया। उन्होंने अपने प्रमुख शिष्य पैलको ऋग्वेद, वैशम्पायनको यजुर्वेद, जैमिनिको सामवेद तथा सुमन्तुको अथर्ववेद-संहिताका सर्वप्रथम अध्ययन कराया था। महाभारत-युद्धके पश्चात् वेदव्यासजीने तीन वर्षके सतत परिश्रमके उपरान्त श्रेष्ठ काव्यात्मक इतिहास 'महाभारत' की रचना की थी। यह महाभारत पञ्चम वेद कहलाता है और इसे व्यासजीने अपने पञ्चम शिष्य लोमहर्षणको पढ़ाया था, जैसा कि महाभारतके अन्तःसाक्ष्यभूत इन श्लोकोंसे विदित होता है—

वेदानध्यापयामास महाभारतपञ्चमान्।
सुमन्तुं जैमिनिं पैलं शुकं चैव स्वमात्मजम्॥
प्रभुर्वरिष्ठो वरदो वैशम्पायनमेव च।
संहितास्तैः पृथक्त्वेन भारतस्य प्रकाशिताः॥

(महा० आदि० ६३। ८९-९०)

त्रिभिर्वर्षैः सदोत्थायी कृष्णद्वैपायनो मुनिः।
महाभारतमाख्यानं कृतवानिदमद्भुतम्॥

(महा० आदि० ६२। ५२)

भगवान् वेदव्यासने वेदको चार भागोंमें विभक्त क्यों किया? इसका उत्तर श्रीमद्भागवतमें इस प्रकार उपलब्ध होता है—

ततः सप्तदशे जातः सत्यवत्यां पराशरात्।
चक्रे वेदतरोः शाखा दृष्ट्वा पुंसोऽल्पमेधसः॥

(१। ३। २१)

अर्थात् महर्षि पराशरद्वारा सत्यवतीसे उत्पन्न वेदव्यासजीने कलियुगमें मानवकी अल्पबुद्धि देखकर (अर्थबोधकी सुगमताकी दृष्टिसे) वेदरूपी वृक्षकी चार शाखाएँ कर दीं। महाभारतके व्याजसे वेदव्यासजीने श्रुतिका अर्थ जन-सामान्यके लिये बोधगम्य बनाया—

भारतव्यपदेशेन ह्याम्नायार्थश्च दर्शितः।

महर्षि वेदव्यास भारतीय ज्ञान-गङ्गाके भगीरथ माने जाते हैं। इन्होंने भगीरथकी ही भाँति भारतीय लोक-साहित्यके आदियुगमें हिमालयके बदरिकाश्रममें अखण्ड समाधि लगाकर अध्यात्म, धर्मनीति और पुराणकी त्रिपथगाका पहले स्वयं साक्षात्कार कर फिर साहित्य-साधनाद्वारा देशके आर्षवाङ्मयको पावन बनाया एवं लोक-साहित्यको गति प्रदान की। अनन्तके उपासक वेदव्यासजीकी साहित्य-साधनाने उन्हें भारतीय ज्ञानका अनन्त महिमान्वित प्रतीक बना दिया है। श्रीवेदव्यासजी अलौकिक प्रतिभा-सम्पन्न महापुरुष थे। विद्वानोंकी परीक्षाभूमि 'श्रीमद्भागवत', समुज्ज्वल भावरत्नोंका निधि 'महाभारत' तथा 'ब्रह्मसूत्र' एवं 'अष्टादश पुराण' आदि उनकी महत्ताके प्रबल समर्थक हैं। इसीलिये व्यासजीकी प्रतिभाकी स्तुतिमें कहा गया है कि जीवनके चतुर्विध पुरुषार्थोंसे सम्बन्ध रखनेवाला जो कुछ ज्ञान महाभारतमें है, वही अन्यत्र है, जो वहाँ नहीं है वह कहीं और भी नहीं मिलेगा—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्॥

(महा० आदि० ६२। ५३)

व्यासजीका जन्म भी यमुनाके ही किसी द्वीपमें हुआ था, इसीलिये इन्हें द्वैपायन, कृष्णवर्ण शरीरके कारण कृष्ण या कृष्णद्वैपायन, बदरीवनमें निवासके कारण बादरायण तथा वेदोंका विस्तार करनेके कारण 'वेदव्यास' कहा जाता है। ये दिव्य तेजःसम्पन्न, तत्त्वज्ञ एवं प्रतिभाशाली थे, इसीलिये इनकी स्तुति करते हुए कहा गया है—

नमोऽस्तु ते व्यास विशालबुद्धे
फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र।
येन त्वया भारततैलपूर्णः
प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः॥

अर्थात् खिले हुए कमलकी पँखुड़ीके समान बड़े-बड़े नेत्रोंवाले तथा विशाल बुद्धिवाले हे व्यासदेव!

आपने अपने महाभारतरूपी तेलके द्वारा दिव्य ज्ञानमय दीपकको प्रकाशित किया है, आपको नमस्कार है।

इनकी असीम प्रभविष्णुता परिलक्षित कर इन्हें त्रिदेवोंकी समकक्षता प्रदान की गयी है—

अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः।
अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणः॥

अभिप्राय यह कि भगवान् बादरायण चतुर्मुख न होते हुए भी ब्रह्मा, दो (ही) भुजाओंवाले होते हुए भी दूसरे विष्णु और त्रिनेत्रधारी न होते हुए भी साक्षात् शिव ही हैं।

भागवतकारके रूपमें इनका वर्णन करते हुए जयाशीके लिये इनके अभिवादनकी अनिवार्यता प्रतिपादित करते हुए कहा गया है—

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥

(श्रीमद्भा० १। २। ४)

इस पुराण-पुरुषकी परम्परा ब्रह्मासे प्रारम्भ होती है और फिर क्रमशः वसिष्ठ, शक्ति, पराशर तथा व्यासका नाम आता है—

व्यासं वसिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम्।
पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम्॥

महापुरुषका व्यक्तित्व इतना महान् होता है कि उसे किसी सीमामें आबद्ध नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि व्यासजीके कार्यक्षेत्रकी सीमा समग्र भारतमें प्रसृत दृष्टिगोचर होती है।

भारतीय जनजीवनमें व्यासजी अजरामर-रूपमें प्रतिष्ठित हैं। आज भी वर्षगाँठके अवसरपर हम जिन सप्त-चिरंजीवियोंका स्मरण करते हैं, उनमें व्यासजीका अन्यतम स्थान है—

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः॥

भगवान् वेदव्यासकी स्थिति वैदिक युगके अन्तमें भी थी, महाभारतकालमें भी थी और आज भी वे नारायणभूत वेदव्यास अनन्तके अनन्त-रूपमें विश्वमें विद्यमान हैं।

व्यासजीने मनुष्यमात्रको अल्पबुद्धि, अल्पायु तथा कर्म-क्रियामें लिप्त देखकर उनके सार्वकालिक कल्याणके लिये वेदोंका विभाजन चार शाखाओंमें किया था, जिसका स्पष्ट निदर्शन श्रीमद्भागवतमें इस प्रकार प्राप्त होता है—

स कदाचित् सरस्वत्या उपस्पृश्य जलं शुचि।
विविक्तदेश आसीन उदिते रविमण्डले॥
परावरज्ञः स ऋषिः कालेनाव्यक्तरंहसा।
युगधर्मव्यतिकरं प्राप्तं भुवि युगे युगे॥
भौतिकानां च भावानां शक्तिह्रासं च तत्कृतम्।
अश्रद्दधानान्निःसत्त्वान् दुर्मेधान् ह्रसितायुषः॥
दुर्भगांश्च जनान् वीक्ष्य मुनिर्दिव्येन चक्षुषा।
सर्ववर्णाश्रमाणां यद्दध्यौ हितममोघदृक्॥
चातुर्होत्रं कर्मशुद्धं प्रजानां वीक्ष्य वैदिकम्।
व्यदधाद् यज्ञसन्तत्यै वेदमेकं चतुर्विधम्॥
ऋग्यजुःसामाथर्वाख्या वेदाश्चत्वार उद्धृताः।
इतिहासपुराणं च पञ्चमो वेद उच्यते॥
तत्रर्ग्वेदधरः पैलः सामगो जैमिनिः कविः।
वैशम्पायन एवैको निष्णातो यजुषामुत॥
अथर्वाङ्गिरसामासीत् सुमन्तुर्दारुणो मुनिः।
इतिहासपुराणानां पिता मे रोमहर्षणः॥
त एत ऋषयो वेदं स्वं स्वं व्यस्यन्ननेकधा।
शिष्यैः प्रशिष्यैस्तच्छिष्यैर्वेदास्ते शाखिनोऽभवन्॥
त एव वेदा दुर्मेधैर्धार्यन्ते पुरुषैर्यथा।
एवं चकार भगवान् व्यासः कृपणवत्सलः॥
स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा।
कर्मश्रेयसि मूढानां श्रेय एवं भवेदिह।
इति भारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतम्॥

(श्रीमद्भा० १। ४। १५—२५)

अर्थात् एक दिन वे पुराणमुनि व्यास सूर्योदयके समय सरस्वतीके पावन जलमें स्नानादि करके एकान्त पवित्र स्थानपर बैठे हुए थे। वे महर्षि भूत और भविष्यके ज्ञाता तथा दिव्य-दृष्टि-सम्पन्न थे। उन्होंने उस समय देखा कि जिसका परिज्ञान लोगोंको नहीं होता, ऐसे समयके फेरसे प्रत्येक युगमें धर्मसंकट रहा और उसके प्रभावसे भौतिक पदार्थोंकी शक्तिका ह्रास होता रहता है। सांसारिक जन श्रद्धाविहीन और शक्तिहीन हो जाते हैं। उनकी बुद्धि कर्तव्य-निर्णयमें असमर्थ एवं आयु अल्प हो जाती है। लोगोंकी इस भाग्यहीनताको देखकर उन्होंने अपनी दिव्यदृष्टिसे समस्त वर्णों और आश्रमोंका हित कैसे हो? इसपर विचार किया। उन्होंने सोचा कि वेदोक्त चातुर्होत्र (होता, अध्वर्यु, उद्गाता, ब्रह्मादिद्वारा सम्पादित होनेवाले अग्निष्टोमादि यज्ञ)-कर्म लोगोंका हृदय शुद्ध करनेवाले हैं, अतः यज्ञोंका विस्तार करनेके लिये उन्होंने एक ही वेदके चार विभाग ऋक्, यजुः, साम तथा अथर्वके रूपमें किये। इतिहास और पुराणको पाँचवाँ

वेद कहा जाता है। उनमेंसे प्रथम स्नातक ऋग्वेदके पैल, सामवेदके जैमिनि, यजुर्वेदके वैशम्पायन तथा अथर्ववेदके सुमन्तु हुए और सूतजीके पिता रोमहर्षण इतिहास-पुराणोंके स्नातक हुए। इन सब महर्षियोंने अपनी-अपनी वैदिक शाखाको अनेक भागोंमें विभक्त कर दिया। इस प्रकार शिष्य, प्रशिष्य तथा उनके शिष्योंद्वारा वेदोंकी अनेक शाखाएँ बन गयीं। अल्प बौद्धिक शक्तिवाले पुरुषोंपर कृपा करके भगवान् वेदव्यासने वेदोंका यह विभाग इसलिये किया, जिससे दुर्बल स्मरणशक्तिवाले तथा धारणाशक्तिहीन (व्यक्ति) भी वेदोंको धारण कर सकें। स्त्री, शूद्र तथा पतित वेद-श्रवणके अनधिकारी हैं; वे शास्त्रोक्त कर्मोंके आचरणमें भूल न कर बैठें, अतः उनके हितसाधनार्थ महाभारतकी इस दृष्टिसे रचना की, जिससे वे भी वेदांश हृदयंगम कर सकें—

भारतव्यपदेशेन ह्याम्नायार्थश्च दर्शितः।

(श्रीमद्भा० १।४।२९)

अर्थात् महाभारत जिसे 'ज्ञानमय प्रदीप' कहा जाता है, इतना अनुपम है कि उसके सम्बन्धमें स्वयं महाभारत आदिपर्व (६२। २३)-में उल्लिखित है—

धर्मशास्त्रमिदं पुण्यमर्थशास्त्रमिदं परम्।
मोक्षशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामितबुद्धिना॥

अर्थात् अमित मेधावी व्यासजीने इसे पुण्यमय धर्मशास्त्र, उत्तम अर्थशास्त्र तथा सर्वोत्तम मोक्षशास्त्र भी कहा है।

वेद-विभागद्वारा भगवान् व्यासने ज्ञान, कर्म, उपासनाकी त्रिपथगामें अवगाहन कराकर अथर्ववेदद्वारा उसे भौतिक दृष्टिसे भी इतना सक्षम बनानेका प्रयास किया है कि हमें एक स्वरसे इस श्लोकके द्वारा उन्हें विनम्र प्रणति करनेपर विवश होना पड़ता है—

जयति पराशरसूनुः सत्यवतीनन्दनो व्यासः।
यस्यास्यकमलगलितं वाङ्मयममृतं जगत् पिबति॥

(डॉ० श्रीवेदप्रकाशजी शास्त्री, एम्० ए०, पी-एच्० डी०)

वेद कथाङ्क (कल्याण-गीताप्रेस)